© 2018 IJSRST | Volume 4 | Issue 7 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X

गोपथ ब्राह्मण में पुरुष का स्वरूप

शैलेन्दु शेखर वशिष्ठ

शोधच्छात्र, संस्कृत विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

शोध आलेख सार – ऋग्वेद के पुरूष सूक्त में पुरूष को विराट परमेश्वर अनन्त सिर वाला, अनन्त आंखों और अनन्त पैरों वाला कहा गया है। इस महान् ब्रह्माण्ड रूप पुर में शयन करने वाला सर्वव्यापक परमात्मा सत्चित् आनन्दस्वरूप सबसे उत्कृष्ट होकर सब पर नियन्त्रण किये हुए अधिष्ठाता के समान होकर वर्तमान है। यहाँ उत्तम पुरुष पूर्णत्व के कारण ब्रह्म है।

मुख्य शब्द– पुरूष,विराट, परमेश्वर, ब्रह्माण्ड, सर्वव्यापक, परमात्मा, सत्चित्, आनन्दस्वरूप।

वैदिक वाङ्मय में 'पुरुष' शब्द अनेकशः प्रयोग हुआ है। ऋग्वेद के पुरुष सूक्त में पुरुष को विराट परमेश्वर अनन्त सिर वाला, अनन्त आंखों और अनन्त पैरों वाला कहा गया है। इसे भूमि को व्याप्त करके दस अङ्गुल प्रमाण में ब्रह्माण्ड के पार स्थित कहा गया है[1]। आचार्य सायण ने इसे प्राणियों की समष्टि के रूप में स्थित ब्रह्माण्ड शरीरी विराट् पुरुष कहा है।[2] सामवेद में पुरुष शब्द को ब्रह्म के अर्थ में उल्लिखित किया गया है। इस महान् ब्रह्माण्ड रूप पुर में शयन करने वाला सर्वव्यापक परमात्मा सत्चित् आनन्दस्वरूप सबसे उत्कृष्ट होकर सब पर नियन्त्रण किये हुए अधिष्ठाता के समान होकर वर्तमान है। इसका ज्ञान और क्रिया रूप शासन ही उस ब्रह्माण्ड पर सत्ता रूप में प्रगट होता और विलीन होता है और वही सर्वत्र भोजन करने वाले प्राणियों और भोजन न करने वाले स्थावर जड़ पदार्थों में भी व्यापक है[3]।

[1] ऋग्वेद 10.90.1 सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्ष : सहप्रपात्।
स भूमिं विश्वतो वृत्वात्यातिष्ठद्दशाङ्गुलम्।।
[2] तदेव (सायणभाष्य) सर्वप्राणिसमष्टिरूपो ब्रह्माण्ड देहो0
[3] जैमिनीयोपनिषद् ब्राह्मण एक समीक्षा पृष्ठ–50

गोपथ ब्राह्मण में पुरुष शब्द का अनेक बार उल्लेख किया गया है। पुरुष को ब्रह्म कहा गया और उसे सब प्रकार से प्रिय भी कहा गया है।[4] तात्पर्य यह है कि यह ब्रह्म स्वरूप है तथा आत्मरूप से सबके हृदय में स्थित होने से सबका प्रिय है। इसे वैदिक सिद्धान्त कहा गया है।

गोपथ ब्राह्मण में पुरुष शब्द का निम्नलिखित निर्वचन किया गया है– **एषः सः प्राणः पुरिशेते सः पुरि शेते इति, पुरिशयं सन्तं प्राणं पुरूष इत्याचक्षते[5]**

इसका अर्थ है कि यही प्राण शरीर में रहता है यही शरीर में रहता है, शरीर में वर्तमान रहते हुए प्राण को पुरुष कहते है अर्थात् यह पुरूष प्राणस्वरूप है, पुरुष प्राणरूप से शरीर में रहता हैं। प्राणरूप में रहने के कारण ही उसे पुरुष कहते हैं। सम्भवतः गोपथकार का मत प्राणमय कोश को पुरुष मानना है यद्यपि सामान्य बुद्धि से विचार किया जाये तो हम प्राणों को ही चेतना का पर्याय मानते हैं क्योंकि श्वास प्रस्वास बन्द हुई तो अस्तित्व समाप्त हो जाता है तथा शरीर को मृत मान लिया जाता है अतः गोपथ ब्राह्मण में प्रस्तुत निर्वचन सत्य एवं समाज की मान्यताओं के अनुरूप प्रतीत होता है।

शतपथ ब्राह्मण में पुरुष का निर्वचन इसप्रकार दिया गया है– इसको पुरुष कहते हैं क्योंकि यह पुरि में शयन करता है[6]। इससे कुछ छिपा नहीं है। इसको और स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि इन्द्र अपनी मायाओं द्वारा पुरु रूप हो जाता है।[7]

आचार्य यास्क ने निरुक्त में पुरुष शब्द का निर्वचन इस प्रकार किया है–

पुरुषः पुरिषादः पुरिशयः पुरयतेर्वा
पूरयत्यन्तरित्यन्तर पुरुषमभिप्रेत्य[8]।

पुरुष शब्द पुर् शब्द से बना है जो शरीर या बुद्धि का नाम है **सद् (षदॢ) 'विषरणग्रत्यवसादनेषु'** धातु से बनता है क्योंकि वह शरीर व बुद्धि में विषयों को उपलब्धि या अनुभव के लिए रहता है। इसमें 'पुरिषाद्' होकर पुरुष शब्द बन गया।

इसी 'पुर शब्द से 'शीङ् स्वप्ने 'धातु मिलकर 'पुरिशय' होकर पुरुष शब्द बना क्योंकि वह विशेषकर उन दोनों में शयन करता है। पूरयति (पुरी आप्यायते) धातु से पुरुष शब्द बना क्योंकि इस पुरुष के व्यापक होने के कारण सब जगत् पूर्ण है।

---

[4] गो0ब्रा0 1.1.39 पुरुषः ब्रह्म, अथ आप्रियानिगम : भवति।
[5] गो0 ब्रा0 1.1.39
[6] शत0ब्रा0 14.5.5.18 पुरुषःसर्वासु पुरुशेशु पुरिशयः।
[7] तदेव
[8] निरुक्त– 2.1

पूरयति अन्तः जिससे कि यह भीतर ही पूर्ण रहता है इस व्युत्पत्ति के सहारे अन्तर पुरुष के अभिप्राय से उसी धातु से पुरुष शब्द बना। अर्थात् अन्तर्यामी होकर सब जगह व्याप्त है ऐसा विग्रह परमात्मा को लक्ष्य करके किया जाता है।

गोपथ ब्राह्मण में पुरुष की तुलना जलरूपी गर्भ से की गई है[9]। अर्थात् यह समस्त संसार जल से परिपूर्ण था तब उसको गर्भ स्वरूप से जिसने धारण किया वह पुरुष है। पुरुष को यज्ञ भी कहा गया है[10]। उसकी साम्यता ऋग्वेद के पुरुष सूक्त में वर्णित विराट् पुरुष से की जा सकती है। वह पुरुष भी स्वयं यज्ञ स्वरूप था[11]। इसी मन्त्र पर भाष्य करते हुए आचार्य सायण ने इसे यज्ञ तथा यज्ञ का साधनभूत पुरुष कहा है।[12] पुरुष को पुण्डरीक कहा गया है[13]। पुण्डरीक शब्द सामान्यतः कमल का वाचक है। परन्तु अथर्ववेद में नौ द्वारों वाले पुण्डरीक का उल्लेख मिलता है[14]। इस नौ द्वार वाले पुण्डरीक को आत्मा का स्थान कहा गया है अर्थात् आत्मा पुण्डरीक का ही स्वरूप है और इसे गोपथ ब्राह्मण मे पुरुषरूप में अभिहित किया गया है। यह ब्रह्म का वाचक है। पुण्डरीक को परम ऐश्वर्ययुक्त शुद्ध स्वरूप ब्रह्म भी कहा गया है[15]। शतपथ ब्राह्मण में पुण्डरीक को दिवोरूप कहा गया है[16]।

संवत्सर जो काल का वाचक है इसे गोपथ ब्राह्मण में पुरुष कहा गया है[17]। इस प्रसंग में पुरुष को संवत्सर स्वरूप कहा गया है। पुरुष के प्राण आदि को प्रायणीय अतिरात्र आदि यज्ञों से साम्यता प्रदर्शित की गई है[18]। पुरुष के विभिन्न अङ्गों से संवत्सर यज्ञ की उत्पत्ति का उल्लेख मिलता है[19]। प्रथम दृष्टया तो पुरुष सामान्य मानव प्रतीत होता है परन्तु गम्भीरता से विचार करने पर यह परम पुरुष का बोधक हो जाता है। संवत्सर के प्रसंग में पुरुष शब्द का उल्लेख अनेक बार किया गया है[20]।

गोपथ ब्राह्मण में पुरुष को यज्ञ कहा गया है[21]। पुरुष के सिर को हविर्धान् मुख को आहवनीय, उदर को सद, आँत को उक्थ्य, दोनों भुजाओं को मार्जालीय एवम् आग्नीध्रीय, देवताओं को अन्तः सद,

---

[9] गो0 ब्रा0 1.1.39 अपां गर्भः पुरुषः
[10] तदेव स यज्ञः
[11] ऋग्वेद 10.90.7 तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन् पुरुषं जातमग्रतः
[12] तदेव पर सायणभाष्य यज्ञं यज्ञसाधनभूतं तं पुरुषम्।
[13] गो0 ब्रा0 1.1.39 पुरुषम् इदं पुण्डरीकम्।
[14] अर्थव 10.08.43 पुण्डरीकं नवद्वारं त्रिभिर्गुणेभिरावृतम।
[15] गो0 ब्रा0 भाष्य पृष्ठ–72
[16] शत0 ब्रा0 5.4.5.14 यानि पुण्डरीकानि तानि दिवोरूपम्।
[17] गो0 ब्रा0 1.5.3.4.5 पुरुष वाव संवत्सरः
[18] तदेव – तस्य प्राणः एव प्रायणीय अतिरात्रः
[19] तदेव – चौथी कण्डिका
[20] तदेव – पाचवीं कण्डिका
[21] तदेव 2.5.4 पुरुषो वै यज्ञः .....इति।

संघिष्ठता और प्रतिष्ठा को गार्हपत्य और व्रत श्रवण कहा है। इस विवेचन से स्पष्ट होता ळे कि गोपथकार के मत में केवल बाह्य भौतिक यज्ञ ही नहीं अपितु प्रत्येक व्यक्ति के भौतिक शरीर में भी निरन्तर यज्ञ चल रहा है। जीवन के प्रथम आश्रम में इसे सीखना तथा अन्य आश्रमों में इसे जीवन में उतारना ही अभीष्ट था।

असक्तावस्था के व्यक्ति इस प्रकार के भाव एवं विचार से यज्ञ का फल पा सकते थे। यज्ञ को पुरुष में उपस्थित करने का यह उद्देश्य गोपथकार का उचित प्रतीत होता है। पुरुष की यज्ञ रूप में अभिव्यक्ति ऋग्वेद में भी की गई है।

गोपथ ब्राह्मण में पुरुष को पाङ्क्त कहा गया है उसका विधान पाँच प्रकार से किया गया है अर्थात् पुरुष को पाँच भागों में विभाजित किया गया है। लोम, त्वचा, हड्डी, मज्जा और मस्तिष्क[22]। ये पाँचों उत्तरोत्तर सूक्ष्म हो जाते हैं।

शाङ्खायन ब्राह्मण में पुरुष को पाङ्क्त कहा गया है[23]। इस प्रसंग में पाँच के महत्त्व का उल्लेख है यहाँ हवि भी पाँच प्रकार की, पशु भी पाँच् पङ्क्ति पाँच और यज्ञ को भी पाङ्क्त कहा गया है[24]। गोपथ ब्राह्मण में होता के रूप में पुरुष का उल्लेख है और इसे एक कहा गया है[25]। एकत्व का यह भाव ब्रह्म परमात्मा का ही बोध कराता है।

सामविधान ब्राह्मण में उत्तम पुरुष को नमस्कार किया गया है[26]। यहाँ उत्तम पुरुष पूर्णत्व के कारण ब्रह्म है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1 – ऋग्वेद
2 – अथर्ववेद
3 – भांखायन ब्राह्मण
4 – भातपथ ब्राह्मण
5 – सामविधान ब्राह्मण
6 – गोपथ ब्राह्मण मूल
7 – गोपथ ब्राह्मण भाश्य
8 – निरुक्त
9 – जैमिनीयोपनिशद् ब्राह्मण एक समीक्षा

[22] गो0 ब्रा0 2.6.8 पाङ्क्तः हि अयं पुरुषः पंचधा विहितः, लोमानित्वक अस्थि मज्जा मस्तिष्कम्।
[23] शांखायन ब्रा0 13.2 पाङक्तः पुरुषः
[24] तदेव – पंच हवींषि पाङ्क्तो यज्ञः
[25] गो0 ब्रा0 2.6.6 पुरुषो वाव होता, स वै एकः एव
[26] सा0 वि0 ब्रा0 1.2.7 उत्तमपुरूषाय नमो नमः